ओ३म्

विकासवाद का वैदिक सिद्धान्त

(लेखक - आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक)
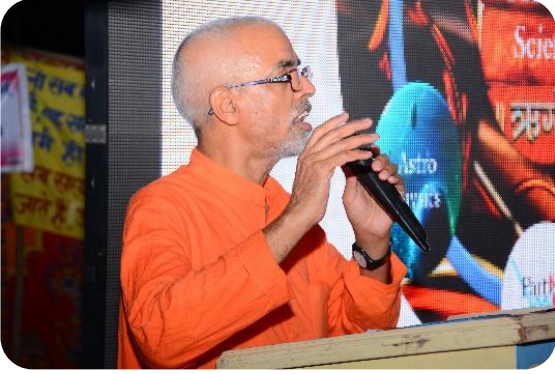
सृष्टि व मनुष्य की उत्पत्ति वैज्ञानिक जगत् के लिए कुतूहल का विषय रही है। चार्ल्स डार्विन के विकासवाद की परिकल्पना के पश्चात् इसके समर्थन तथा विरोध दोनों ही पक्षों में बहस चलती आ रही है। विकासवादी अवधारणा अमीबा से लेकर मनुष्य तक की श्रृंखला को क्रमिक विकास की देन मानती है, जिसमें विभिन्न प्रजातियों में परिस्थितियों के अनुकूल कुछ परिवर्तन आते रहकर उन्हीं से नयी-2 प्रजातियां उत्पन्न होती रहीं। इस प्रकार इस विचारधारा के अनुसार मनुष्य एवं अन्य पशु-पक्षियों, कीट-पतंगों, सभी के पूर्वज एक ही थे तथा आधुनिक बन्दर मनुष्य का सर्वाधिक निकट सम्बन्धी है। विभिन्न प्रजातियों में नाना अंगों का विकास स्वयमेव आवश्यकता के अनुरूप होता रहा अर्थात् एक प्राणी दूसरे प्राणी में किसी विकृति के कारण बदलता रहा। इस विकासवाद के विरुद्ध भी अनेक विदेशी वैज्ञानिकों ने समय-2 पर अनेक सिद्धान्त दिए हैं। शारीरिक विकास, बौद्धिक विकास एवं भाषा के विकास, इन तीनों ही विषयों
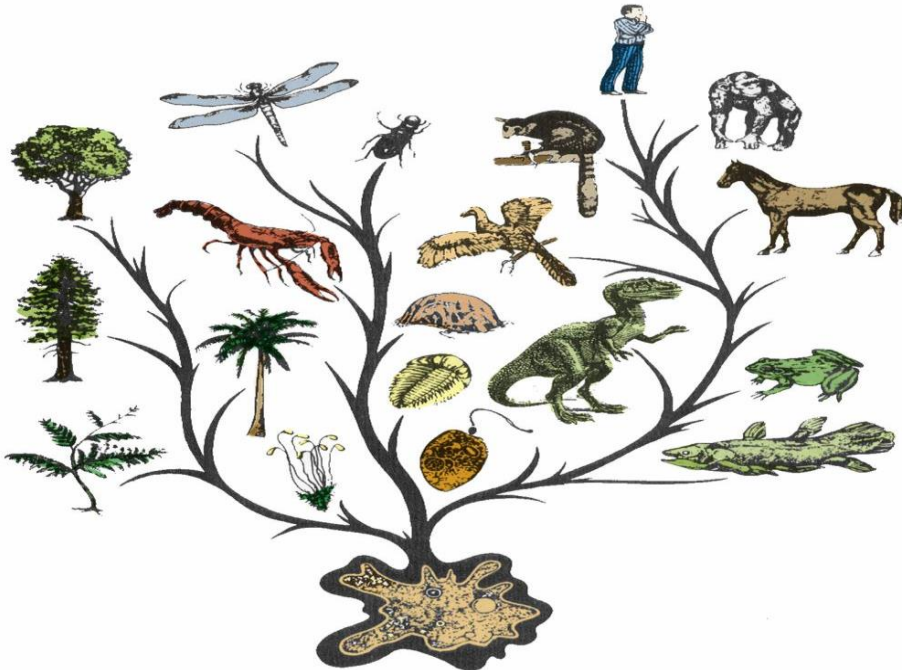
पर विकासवाद के विरोधी विदेशी वैज्ञानिकों ने भी अनेक गम्भीर प्रश्न खड़े किये हैं, परन्तु विकासवादी कभी इन प्रश्नों का समुचित उत्तर नहीं दे पाते। इधर भारत में **महर्षि दयानन्द सरस्वती** एवं उनके परवर्ती व अनुयायी अनेक विद्वानों ने विकासवाद की अवधारणा को मिथ्या सिद्ध किया है, पुनरपि डार्विन का विकासवाद आज भी कुछ पूर्वाग्रही वैज्ञानिकों के लिए आदर्श सिद्धान्त बना हुआ है।

अभी केन्द्रीय मानव संसाधन विकास राज्य मंत्री **श्रीमान् डॉ. सत्यपालसिंह जी के वक्तव्य कि हम सभी मानव बन्दरों की नहीं, बल्कि मानव की ही सन्तान हैं, पर ये महानुभाव कोलाहल करते हुए उन पर चतुर्दिक् आक्रमण करने लगते हैं।** देश के वैज्ञानिक व वैज्ञानिक संस्थान भी सब एकजुट हो जाते हैं। मैंने भी इन सभी से सोशल मीडिया के माध्यम से अनेक प्रश्न पूछे थे परन्तु किसी भी प्रमाणित संस्था वा विद्वान् ने मेरे प्रश्नों का उत्तर नहीं दिया बल्कि कुछ महानुभावों ने अनर्गल प्रलाप ही किया। इन महानुभावों को किसी भी देशी अथवा विदेशी वैज्ञानिक अथवा विचारक का यह कथन कदापि स्वीकार नहीं कि हम मनुष्य की ही सन्तान हैं?

मेरे प्रश्नों के उत्तर में केवल मेरा सिद्धान्त जानने की इच्छा व्यक्त करने वाले महानुभावों के लिए मैं वैदिक विकासवाद पर अपने संक्षिप्त विचार प्रस्तुत करता हूँ।

वस्तुतः **'विकासवाद'** शब्द पर विचार करें, तो यह शब्द अति उत्तम व सार्थक है, लेकिन डार्विन एवं उनके समर्थकों ने इस शब्द का समुचित अर्थ नहीं जाना और अपने अवैज्ञानिक मत को **'विकासवाद'** विशेषण से विभूषित करने का प्रयास किया। अगर हम सम्पूर्ण सृष्टि पर गम्भीरता से विचार करें, तो स्पष्ट होता है कि सम्पूर्ण सृष्टि एवं उसका प्रत्येक उत्पन्न पदार्थ विकास की सीढ़ियां चढ़ते-2 ही वर्तमान स्वरूप में आज दिखाई दे रहा है। बिना क्रमिक विकास के प्राणी जगत् की बात ही क्या करें, कोई लोक-लोकान्तर वा एक कण, फोटोन आदि भी कभी नहीं बन सकता। **वैदिक विज्ञान विकासवाद की विशद व्याख्या करता है परन्तु हमारा विकासवाद डार्विन का विकासवाद कदापि नहीं है। डार्विन का विकासवाद वस्तुतः विकासवाद नहीं है, बल्कि अनियन्त्रित व बुद्धिविहीन यदृच्छयावाद (मनमानापन) है,** जिसे भ्रमवश वैज्ञानिक विकासवाद नाम दिया जा रहा है।

वास्तव में **विकास का अर्थ है, बीज से अंकुर, अंकुर से पौधा व उससे पुष्प, फल व पुनः बीज का उत्पन्न होना।** आज विज्ञान जिन्हें मूल कण मान रहा है, वे क्वार्क तथा फोटोन्स भी वास्तव में मूल पदार्थ नहीं है। वे भी सूक्ष्म रश्मियों को संघनित रूप हैं अर्थात् उन रश्मियों के नाना समुदायों के विकसित रूप हैं। जो String theorist इन कणों को सूक्ष्म Strings से निर्मित मानते हैं, वे Strings भी मूल तत्व नहीं हैं, बल्कि वे वैदिक रश्मियों के संघनित व विकसित रूप हैं। Strings व कणों वा फोटोन्स के विकास से वर्तमान विज्ञान अनभिज्ञ है। जीवविज्ञानी जिस अमीबा को सबसे छोटी इकाई मानते हैं अथवा उसके अन्दर विद्यमान गुणसूत्र, जीन्स, D.N.A. आदि को सूक्ष्मतम पदार्थ मानते हैं, वे नहीं जानते कि **जहाँ उनका जीव विज्ञान समाप्त हो जाता है, वहाँ भौतिक विज्ञान प्रारम्भ होता है और जहाँ वर्तमान भौतिक विज्ञान समाप्त हो जाता है, वहाँ वैदिक भौतिक विज्ञान प्रारम्भ होता है और जहाँ वैदिक भौतिक विज्ञान की सीमा समाप्त हो जाती है, वहाँ वैदिक आध्यात्मिक विज्ञान प्रारम्भ होता है।** आज विडम्बना यह है कि वैदिक भौतिक विज्ञान एवं वैदिक आध्यात्मिक विज्ञान की नितान्त उपेक्षा करके वा उसका उपहास वा विरोध करके भौतिक विज्ञान एवं जीव विज्ञान आदि की समस्याओं का हल खोजने का प्रयास किया जा रहा है। यह भी एक दुःखद सत्य है कि संसार को वैदिक भौतिक विज्ञान से अवगत कराने वाले भी कहाँ हैं? इस कारण वर्तमान विज्ञान अनेक समस्याओं से ग्रस्त है तथा एक समस्या का समाधान करने का प्रयास करता है, तो अनेक नई समस्याओं को उत्पन्न भी कर लेता है। एक टैक्नोलॉजी का आविष्कार करता है, तो नाना दुष्प्रभावों को भी उत्पन्न कर लेता है, दवाओं के विकास के साथ रोगों का भी निरन्तर विकास हो रहा है, सुख-साधनों के विकास के साथ-2 अपराधों एवं पर्यावरण प्रदूषण को भी समृद्ध करता जा रहा है। इन सब समस्याओं का मूल कारण है, वर्तमान विज्ञान का अपूर्ण ज्ञान, जिसका कारण वैदिक ज्ञान की उपेक्षा ही है। अस्तु।
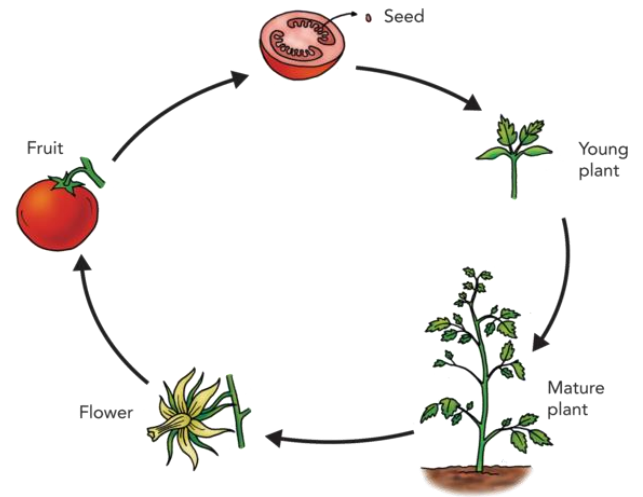
हम चर्चा कर रहे थे कि सृष्टि का प्रत्येक कथित मूलकण व फोटोन सूक्ष्म वैदिक रश्मियों के अति बुद्धिमत्तापूर्ण संयोग से बने हैं। वे रश्मियां मनस्तत्व एवं मनस्तत्व, काल व प्रकृति के संयोग से उत्पन्न होता है। **सबके**

पीछे सर्वनियन्त्रक, सर्वशक्तिमान्, सर्वव्यापक, निराकार, सर्वज्ञ चेतन सत्ता ईश्वर की प्रेरणा है। सृष्टि के सर्वाधिक सूक्ष्म तत्व प्रकृति से लेकर वर्तमान मूलकणों तक की विकास यात्रा बड़ी लम्बी व व्यवस्थित वैज्ञानिक प्रक्रिया है, जिसका वर्तमान भौतिक वैज्ञानिकों को विशेष भान नहीं है। मूलकणों एवं फोटोन की उत्पत्ति से लेकर तारे, ग्रह व उपग्रहों तक के निर्माण तक की विकास यात्रा की चर्चा यहाँ करना उचित नहीं। वैसे वर्तमान Cosmology, Particle Physics, Astrophysics, Quantum field theory, String theory जैसी विभिन्न शाखाएं इन विषयों की अपनी सीमा के अन्दर व्याख्या करती हैं। मेरा विषय भी इन्हीं पदार्थों पर गम्भीर प्रकाश डालना है। जीव विज्ञान मेरा विषय नहीं है, पुनरपि वर्तमान अन्ध कोलाहल के बीच कुछ युवकों के आग्रह पर मैं अपनी बात भौतिक विज्ञान की गहराइयों को छोड़कर वनस्पति व प्राणिजगत् की उत्पत्ति पर ही केन्द्रित करता हूँ।

जब पृथिवी जैसा कोई ग्रह अपने तारे से पृथक् होता है, किंवा तारा उन ग्रहों से पृथक् होकर दूर जाता है, उस समय ग्रह का स्वरूप आग्नेय होता है। धीरे-2 वह आग्नेय रूप ठंडा होकर द्रवीय रूप में परिणत होने लगता है और उस समय उत्पन्न जल वाष्प धीरे-2 ठंडे होकर वृष्टि होने से पृथिवी पर जल भी भरने लगता है। जो भाग जल से बाहर रहता है, वहाँ भी जीवन की उत्पत्ति हेतु आवश्यक तत्व आक्सीजन, हाइड्रोजन, कार्बन, नाइट्रोजन, D.N.A., R.N.A., वसा, अमीनो अम्ल, प्रोटीन, जल आदि विभिन्न रासायनिक अभिक्रियाओं के निरन्तर चलते रहने के कारण उत्पन्न होने लगते हैं। इनकी उत्पत्ति में सहस्रों वर्ष लगते हैं। ये सभी पदार्थ इस पृथिवी पर यत्र-तत्र द्रव व गैस रूप में भर जाते हैं। सद्यः उत्पन्न सागरों में भी ये पदार्थ उत्पन्न हो जाते हैं। इनके पुनः अग्रिम विकसित व संयुक्त रूप से एककोशीय वनस्पति की उत्पत्ति होती है। **विभिन्न एटम्स व छोटे मॉलीक्यूल्स के विशिष्ट व बुद्धिजन्य संयोग से वनस्पति कोशिका की उत्पत्ति अति रहस्यमयी व व्यवस्थित प्रक्रिया है। यह बात सदैव ध्यातव्य है कि सूक्ष्म रश्मियों से लेकर वनस्पति कोशिका के निर्माण के सहस्रों चरणों का संचालन किसी यदृच्छया (मनमानापन) प्रक्रिया से सम्भव नहीं हो सकता और न ही यह सब निष्प्रयोजन और अनियंत्रित प्रक्रिया है, बल्कि यह ईश्वर तत्व द्वारा बुद्धिपूर्वक प्रेरित, नियंत्रित व एक विशिष्ट प्रयोजनयुक्त प्रक्रिया है।** एक-2 कोशिका की संरचना को ध्यान से देखें, तो पायेंगे कि इसमें अरबों सूक्ष्म कणों का एक विशिष्ट वैज्ञानिक संयोग है और उनमें से प्रत्येक कण सैकड़ों सूक्ष्म वैदिक रश्मियों का विशिष्ट संयुक्त वा विकसित रूप है। इस कारण सर्वत्र चेतन शक्ति की अनिवार्य भूमिका है। इसके बिना यह प्रक्रिया एक कदम आगे नहीं बढ़ सकती। यह भी ध्यातव्य है

कि जल, वायु, भूमि एवं इनमें वा इनके द्वारा नाना जीवनीय तत्व बनने के उपरान्त सर्वप्रथम वनस्पति की ही उत्पत्ति होती है। वनस्पति कोशिका के उत्पन्न होने, उसके जीवित रहने एवं उसके विकसित होकर पौधे के उत्पन्न होने के लिए आवश्यक तत्वों की उत्पत्ति पहले होती है, उसके पश्चात् ही वनस्पति कोशिका का जन्म रासायनिक प्रक्रिया से होता है। प्राणी कोशिका वनस्पतियों के निर्माण के पश्चात् ही उत्पन्न होती है। इसका कारण है कि सभी जीव-जन्तु वनस्पतियों पर ही प्रत्यक्ष वा परोक्ष रूप से निर्भर हैं। मांसाहारी प्राणी शाकाहारी प्राणियों पर निर्भर रहते हैं। **इस कारण वनस्पतियों की उत्पत्ति के पश्चात् जीव जन्तुओं की उत्पत्ति एककोशीय जीव से ही प्रारम्भ होती है।** वनस्पतियों में भी सरल से जटिल संरचना वाली वनस्पतियों की क्रमिक उत्पत्ति होती है। **क्रमिक उत्पत्ति का अर्थ यह नहीं कि शैवाल विकसित होकर वट वृक्ष बन जाये अथवा पीपल, आम और बबूल बादाम का रूप ले ले।** इसी प्रकार एककोशीय जीव अमीबा की उत्पत्ति भूमि वा जल में होती है, लेकिन **कोई जीव भले ही वह एककोशीय हो अथवा बहुकोशीय, केवल कुछ पदार्थों का रासायनिक संयोग मात्र ही नहीं होता, अपितु उसके अन्दर सूक्ष्म चेतन तत्व जीवात्मा का भी संयोग होता है।** सम्पूर्ण संयोग ही जीव का रूप होता है। वर्तमान विज्ञान भी रासायनिक संयोगों से कोशिका की उत्पत्ति मानता है-

A very important step the formation of a cell must have been the development of lipid mambrane. In order that biological systems can function efficiently, it is essential that the enzymes connected with successive stages of synthesis of biochemical pathway should be in a close a proximity to one another. The necessary conditions for this are obtained in cells by means of lipid manbranes which can maintain local high concentration of reactants. The presence of hydrocarbons early in the earth's history has already been mentioned....

Life requires for its maintanance a continous supply of energy this could have been provided by ultraviolate or visible light from the sun, or possibly partly from the break down of unstable free radiations produced in the earth's atmosphere by ultraviolate light. [Cell Biology, page - 474 by E.J. Ambrose & Dorothy M.Easty, London -1973]

भाव यह है कि इस पृथिवी पर रासायनिक, जैविक क्रियाओं से विभिन्न प्रकार के एंजाइम्स का निर्माण होकर जीवन हेतु आवश्यक पदार्थों का निर्माण हो गया। इसके साथ ही अनेकत्र रासायनिक पदार्थों द्वारा ही कोशिका भित्तियों तथा जीव द्रव्यादि का निर्माण इस भूमि पर हुआ तथा उन कोशिकाओं को सतत पोषण देने का कार्य पृथिवी पर उपस्थित आवश्यक रासायनिक पदार्थों तथा सूर्य के प्रकाश ने किया।

कुछ वैज्ञानिक ऐसा मानते हैं कि पृथिवी पर जीवन किसी अन्य ग्रह से आया, उनसे हम जानना चाहते हैं कि जिस प्रकार किसी अन्य ग्रह पर जीवन की उत्पत्ति हो सकती है, उसी प्रकार इस पृथिवी पर क्यों नहीं हो सकती? वस्तुतः ऐसा विचार सर्वथा अपरिपक्व सोच का परिणाम है। वर्तमान कुछ वैज्ञानिक भी इस धारणा से सहमत नहीं हैं। वे कहते हैं-

The view the life did infact originate on the earth itself after it had cooled over a period of many thousands of years is almost universally accepted today. [Cel Biology, page - 474]

जो वैज्ञानिक अमीबा से विकसित होकर अर्थात् एक प्रजाति से दूसरी प्रजाति के उत्पन्न होने की बात करते हैं, वे यह नहीं विचारते कि न तो वनस्पति में और न प्राणियों में ऐसा परिवर्तन सम्भव है और न इसकी कोई आवश्यकता है। हम यहाँ वैज्ञानिकों के कल्पित व मिथ्या विकासवाद पर कोई प्रश्न इस कारण नहीं करेंगे, क्योंकि हम इस पर पहले अनेक प्रश्न कर चुके हैं। जो डार्विन के विकासवाद की विस्तार से समीक्षा चाहते हैं, उन्हें आर्य विद्वान् पं.रघुनन्दन शर्मा द्वारा लिखित **'वैदिक सम्पति'** नामक ग्रन्थ पढ़ना चाहिए। भला **जब अमीबा की उत्पत्ति रासायनिक क्रियाओं से हो सकती है, तब विभिन्न प्राणियों के शुक्राणु व अण्डाणु की उत्पत्ति इसी प्रकार क्यों नहीं हो सकती?** जब 500 से अधिक गुणसूत्रों वाला अमीबा रासायनिक अभिक्रिया से उत्पन्न हो सकता है, तब बन्दर, चिम्पैंजी, ओरांगउटान जिनमें 48-48 गुणसूत्र होते हैं, ४६ गुणसूत्र वाले मनुष्य में स्त्री व पुरुष के 23-23 गुणसूत्र वाले शुक्राणु व अण्डाणु की उत्पत्ति अमीबा की भांति क्यों नहीं हो सकती? मनुष्य के ही बराबर गुणसूत्र वाले Sable Antelope जैसे हिरन जैसे पशु तथा Reaves's Muntjac नामक हिरन जैसे जानवर के शुक्राणु व अण्डाणु, 56 गुणसूत्र वाले हाथी के शुक्राणु व अण्डाणु क्यों उत्पन्न हो सकते? चींटी, जिसमें केवल 2 गुणसूत्र ही होते हैं, वह क्यों उत्पन्न हो सकती?

यहाँ **वैदिक मत यह है कि जिस जीव के भरण-पोषण हेतु जितने कम पदार्थों की आवश्यकता होती है, वह जीव उतना पहले ही उत्पन्न होता है।**

सभी प्राणियों से पूर्व वनस्पतियों की उत्पत्ति होती है और मांसाहारी प्राणियों से पूर्व शाकाहारी प्राणियों की तथा शाकाहारियों में मनुष्य एक ऐसा प्राणी है, जिसे सबसे विकसित वा उन्नत माना जा सकता है एवं वह विभिन्न प्राणियों व वनस्पतियों पर निर्भर रहता है, इसी कारण उसकी उत्पत्ति सबसे बाद में होती है।

अब प्रश्न यह उठता है कि भ्रूणों का विकास बिना मादा के कैसे होता है? शुक्राणु व अण्डाणु तो मानलें रासायनिक क्रिया के फलस्वरूप भूमि वा जल में उत्पन्न हो गया परन्तु शुक्राणु व अण्डाणु का निषेचन व भ्रूण का विकास कहाँ व कैसे हुआ? इस विषय में मनुष्योत्पत्ति की चर्चा करते हुए **महर्षि दयानन्द सरस्वती ने 'सत्यार्थ प्रकाश' नामक ग्रन्थ में युवावस्था में भूमि से उत्पत्ति बताई है।** उन्होंने तर्क दिया है कि यदि शिशु अवस्था में उत्पत्ति होती तो, उनकी रक्षा व पालन कौन करता तथा यदि वृद्ध उत्पन्न होते, तो वंश परम्परा कैसे चलती? इस कारण मनुष्य की युवावस्था में ही भूमि से उत्पत्ति होती है। यद्यपि इस विषय में उन्होंने कोई प्रमाण नहीं दिया परन्तु हमें **ऋग्वेद** के प्रमाण इस विषय में मिले, जहाँ लिखा है-

उप सर्प मातरं भूमिमेतामुरुव्यचसं पृथिवीं सुशेवाम्।
ऊर्णम्रदा युवतिर्दक्षिणावत एषा त्वा पातु निर्ऋतेरुपस्थात्।। १०.१८.१०

इस पर मेरा आधिभौतिक भाष्य - हे जीव! (**सुशेवाम्**) {**सुशेवः सुसुखतमः- निरुक्त ३.३**} उत्तम सुख देने में सर्वश्रेष्ठ (**एताम्**) इस (**मातरम्**) माता के समान (**भूमिम्**) प्रारम्भ में जिसके गर्भ में सभी प्राणी उत्पन्न होते वा जिस पर सभी प्राणी निवास करते हैं, वह पृथिवी (**उरु-व्यचसम्**) अति विस्तार वाली होकर सभी भ्रूणों को (**उप सर्प**) निकटता से प्राप्त होती है, इसके साथ ही उस गर्भ का आन्तरिक आवरण निरन्तर हल्का स्पन्दन करता रहता है (**ऊर्णम्रदा**) {**ऊर्णम्रदा इत्यूर्णमृद्वीत्येवैतदाह- काश. ४.२.१.१०, साध्वी देवेभ्य इत्येवैतदाह यदाहोर्णम्रदसं त्वेति- श. १.३.३.११**} वह भूमि उन भ्रूणों को ऐसा आच्छादन प्रदान करती है, जो ऊन के समान कोमल, चिकना व आरामदायक हो। वह उस दिव्य भ्रूण को सब ओर से गर्भ के समान सुखद स्पर्शयुक्त घर प्रदान करती है। (**युवतिः**) उस गर्भरूप पृथिवी में नाना जीवनीय रसों के मिश्रण-अमिश्रण की क्रियाएं निरन्तर चलती रहती हैं (**दक्षिणावतः**) वह पृथिवी उन भ्रूणों को तब तक पोषण प्रदान करती रहती है, जब तक वे अपना पालन व रक्षण करने में पूर्ण दक्ष अर्थात् सक्षम न हो जायें (**एषा**) यह भूमि (**त्वा**) तुम जीव को (**निर्ऋतेः-उपस्थात्**) {**निर्ऋतिर्निरमणात् ऋच्छतेः कृच्छ्रापत्तिरितरा- निरु. २.८**} पूर्ण रूप से निरन्तर सानन्द रमण करती है, ऐसे सुरक्षित व

उत्तम स्थानों में (**पातु**) उन भ्रूणों वा जीवों का पालन करती है। इसके साथ ही जहाँ क्लेश पहुंच सकता है, ऐसे असुरक्षित स्थानों से उस भूमि के गर्भरूप आवरण उस जीव वा भ्रूण की रक्षा करते हैं।
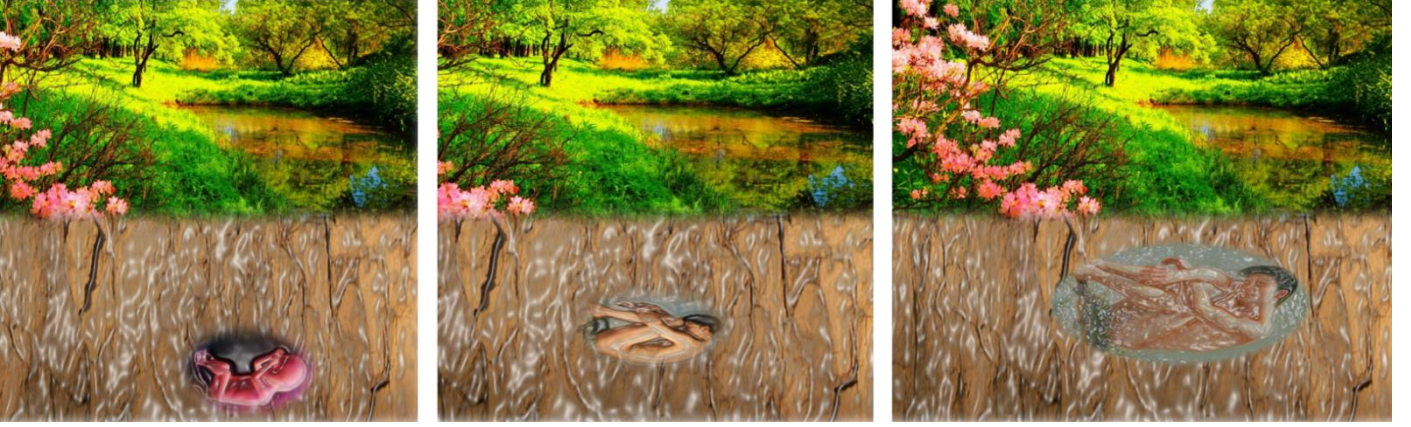
उच्छ्वञ्चस्व पृथिवी मा नि बाधथाः सूपायनास्मै भव सूपवञ्चना।
माता पुत्रं यथा सिचाभ्येनं भूम ऊर्णुहि।। १०.१८.११

मेरा आधिभौतिक भाष्य – (**पृथिवि**) वह गर्भरूप पूर्वोक्त पृथिवी (**उच्छ्वञ्चस्व**) उत्कृष्टरूपेण ऊर्ध्व दिशा में स्पन्दित होती हुई किंवा उफनती हुई होती है। (**मा बाधथाः**) उस भूमि का आवरण ऐसा होता है, जो उसके अन्दर पल रहे भ्रूण वा जीव को प्राप्त हो रहे जीवनीय रसों को नहीं रोकता है अर्थात् वे रस रिस-2 कर उस जीव को प्राप्त होते रहते हैं (**अस्मै**) वह इस जीवन के लिए (**सूपायना-भव**) वह भूमि उसे पोषक व संवर्धक जीवनीय तत्वों का उपहार भेंट करती है (**सूपवञ्चना**) {**उपवञ्चनम् = दुबकना- आप्टे**} वह भूमि आवरण उन भ्रूणों वा जीवों को अच्छी प्रकार छिपाकर आश्रय प्रदान करता है (**माता यथा**) जिस प्रकार माता अपनी सन्तान को गोद वा गर्भ में ढक कर सुरक्षा प्रदान करती है, उसी प्रकार (**नि-सिचा भूमेः**) {**नि+सिच् = ऊपर डाल देना, गर्भयुक्त करना- आप्टे**} भूमि के वे भाग उन जीवों को अपने गर्भ में लेकर उनके ऊपर नाना आवरणों के द्वारा (**एनं**) उन जीवों को (**अभि ऊर्णुहि**) सब ओर से आच्छादित कर लेते हैं।

उच्छ्वञ्चमाना पृथिवी सु तिष्ठतु सहस्रं मित उप हि श्रयन्ताम्।
ते गृहासो घृतश्चुतो भवन्तु विश्वाहास्मै शरणाः सन्त्वत्र।। १०.१८.१२

मेरा आधिभौतिक भाष्य – (**उच्छ्वञ्चमाना**) पूर्वोक्त उफनी एवं मृदु स्पन्दन करती हुई सी कोमल (**पृथिवी**) भूमि (**सु तिष्ठतु**) उन भ्रूणों वा जीवों की

आच्छादिका होकर सुदृढ़ता से सुरक्षापूर्वक स्थित होकर उन जीवों को भी स्थैर्य प्रदान करती है (**सहस्रम् मितः**) उस भूमि के पृथक्-2 स्थानों में अनेक संख्या में (**उप हि श्रयन्ताम्**) जीव निकटता से आश्रय पाते हैं किंवा उन गर्भरूप स्थानों में बड़ी संख्या में {**मितः = मिनोतिगतिकर्मा- निघं. २.१४**} विभिन्न सूक्ष्म अणुओं का प्रवाह बना रहता है (**ते गृहासः**) भूमि के वे स्थान उन जीवों के लिए घर के समान होते हैं {**गृहाम् = गृहाः कस्माद् गृह्णातीति सताम्- निरु. ३.१३**} और घर के समान वे भूकोष्ठ उन जीवों को ऐसे ही पकड़े वा धारण किए रहते हैं, जैसे माता अपनी सन्तान को गर्भ में धारण किए रहती है (**धृतश्चुतो भवन्तु**) वे भूकोष्ठ ऐसे होते हैं कि उनमें घी के समान चिकने रस सदैव रिसते रहते हैं (**अस्मै**) वे उन जीवों के लिए (**विश्वाहा**) {**विश्वाहा = सर्वाणि दिनानि- म.द.य.भा. ७.१०**} सर्वदा अर्थात् पूर्ण युवावस्था तक (**शरणाः सन्तु अत्र**) इस अवस्था में वे जीव उन कोष्ठों में आश्रय पाते हैं।

इन मंत्रों में भूमि के अन्दर युवावस्था तक कैसे मनुष्य सहित सभी जरायुज प्राणी विकसित होते हैं, इसका सुन्दर चित्रण किया गया है।

जिस प्रकार अमीबा आदि एक कोशीय प्राणी की कोशिका का निर्माण रासायनिक व जैविक क्रियाओं से होता है, उसी प्रकार बहुकोशीय जरायुजों तथा अण्डजों के भी शुक्र तथा रज का निर्माण इस उफनी हुई कोमल तथा सभी आवश्यक पदार्थ, जो भी माता के गर्भ में होते हैं, से परिपूर्ण पृथिवी के धरातल की परतों में हो जाता है। अब हम विचारें कि भ्रूण के पोषण के लिए माता के गर्भ की आवश्यकता क्यों होती है? इस कारण, ताकि भ्रूण को आवश्यक वृद्धि हेतु पोषक पदार्थ प्राप्त हो सकें, भ्रूण को सुरक्षित कोमल, चिकना आवरण तथा आवश्यक ताप मिल सके। यदि इन परिस्थितियों को माता के गर्भ से अन्यत्र कहीं उत्पन्न कर दिया जाये, तो भ्रूण का विकास वहीं हो जायेगा, जिस प्रकार आज परखनली से बच्चे पैदा किये गये हैं।

हाँ, एक बात महत्व की है कि **उस समय मनुष्य वा कोई भी जरायुज युवावस्था में भूमि से उद्भिजों की भांति उत्पन्न होता है।** भगवद् दयानन्द जी महाराज का यह कथन सर्वथा उचित है कि यदि शिशु उत्पन्न हो, तो पालन कौन करे और यदि वृद्ध पैदा होते, तब उनसे वंश कैसे चलता? (देखें- **सत्यार्थ प्रकाश, अष्टम समुल्लास**) उपनिषत्कार ऋषि इसे और विस्तार देता है-

तस्माच्च देवा बहुधा संप्रसूताः साध्या मनुष्याः..........।। मुण्डक उप.२.१.७

अर्थात् उस परमात्मा से अनेक विद्वान् सिद्धि प्राप्त जन तथा साधारण विद्वान् जन पैदा हुए।

आर्य विद्वान् **आचार्य वैद्यनाथ जी शास्त्री** ने **''वैदिक युग और आदिमानव''** में बोस्टन नगर (अमेरिका) के स्मिथ सीनियन इंस्टीट्यूट के जीव विज्ञान के विभागाध्यक्ष **डाक्टर क्लार्क** को उद्धृत करते हैं-

Man appeared able to think walk and defend himself. अर्थात् मनुष्य सृष्टि के आदि काल में सोचने, चलने तथा स्वयं की रक्षा करने में समर्थ उत्पन्न होता है।

यहाँ कोई यह प्रश्न करे कि पृथिवी रूपी गर्भ में पच्चीस वर्ष तक युवा कैसे पलता और बढ़ता रहा? तो इस पर गम्भीरता से विचारें, तो कोई आपत्ति प्रतीत नहीं होती क्योंकि जिस प्रकार आज भी एक बालक, जो लगभग 9 मास माता के गर्भ में रहता है। प्रसव के पूर्व न श्वांस लेता है, न रोता है, न हंसता है, न हाथ-पैर फेंकता है, न खाता, पीता, मल-मूत्रादि विसर्जित करता है, उसमें प्रसव के तुरन्त बाद सभी क्रियायें तुरन्त प्रारम्भ हो जाती है। तब यह क्या अद्भुत बात नहीं है, आश्चर्यजनक नहीं है? यदि किसी व्यक्ति को इस सबसे दूर रखा जाये और इस प्रसव प्रक्रिया से नितान्त अनभिज्ञ होवे, तब वह इस प्रसव प्रक्रिया को सम्भव नहीं मानेगा। यदि उसने अण्डजों की ही उत्पत्ति देखी हो, तो वह जरायुजों की प्रसव प्रक्रिया को अण्डजों से भिन्न मानने को तैयार नहीं होगा। इसलिए युवावस्था में प्राणियों की उत्पत्ति असम्भव नहीं है, हाँ, अद्भुत अवश्य है। फिर इतनी सृष्टि प्रक्रिया की जटिलता, क्रमबद्धता, वैज्ञानिकता क्या अद्भुत नहीं है? तब युवावस्था में प्राणी उत्पत्ति कहाँ विचित्र रह जाती है?

यह भी जानना आवश्यक है कि जिस प्रकार रासायनिक अभिक्रियाओं से भूमि रूपी माता के अन्दर प्राणियों की उत्पत्ति होकर सभी जुरायुज, अण्डज तथा स्वेदज एक ही प्रकार से भूमि की परतों में उद्भिजों की भाँति युवावस्था में पैदा हुए, उसी प्रकार रासायनिक अभिक्रियाओं से विभिन्न वनस्पतियों के बीज भूमि की परतों में बनकर तथा आवश्यक पोषक पदार्थ पृथिवी पर ही मिल जाने से यत्र-तत्र पौधे, वनस्पति वा विशालकाय वृक्ष पूर्व में ही उत्पन्न हो गये थे। जिस प्रकार कोई प्राणी उत्पन्न होता है, उसका भोजन उसे तत्काल भूमि पर तैयार मिलता है। मनुष्यों के अनेकों नर-नारी जोड़े युवावस्था में भूमि पर प्रकट हुए, उस समय उसे पृथिवी फल, फूल व अन्न आदि से परिपूर्ण मिली और वे भूमि से निकल कर तत्काल ही फलादि उसी प्रकार खाने को प्रवृत्त हुए, जिस प्रकार आज बालक (मनुष्य वा गाय आदि पशु का) पैदा होते ही माता का दुग्धपान करने लगता है। इसमें कहीं कोई सन्देह वा शंका को अवकाश नहीं है।

यह मैंने संक्षेप में मनुष्य की उत्पत्ति के विषय में लिखा। **मुझे बड़ा आश्चर्य है कि चार्ल्स डार्विन के पश्चात् उनके पुत्रों सहित अनेकों यूरोपियन वैज्ञानिकों ने भी इस मिथ्या विकासवाद का खण्डन किया परन्तु पाश्चात्य के दास बने कथित प्रबुद्धों के मस्तिष्क में अभी चार्ल्स डार्विन का भूत बैठा हुआ है।**

अब मैं संक्षेप में **पं. रघुनन्दन शर्मा** द्वारा लिखित पुस्तक **'वैदिक सम्पत्ति'** से कुछ वैज्ञानिकों के विचारों को भी उद्धृत करना चाहता हूँ-

सर ओलिवर लॉज लिखते हैं-

We are in the process of evolution; we have arrived in this planet by evolution. That is all right. What is evolution? Unfolding development-unfolding as a bud unfolds into a flower, as an acron into an oak. Every thing is subject to a process of growth, of development, of unfolding.

अर्थात् हम लोग विकास के ही प्रबन्धाधीन हैं। हम लोग विकास द्वारा ही इस पृथिवी ग्रह पर पहुंचे हैं। यह सब सत्य है, किन्तु विकास क्या है? विकास अबाधित उन्नति है। अबाधित अर्थात् कली से फूल हो जाने का नियम-बीज से वृक्ष हो जाने का मार्ग। प्रत्येक पदार्थ कली से फूल की भांति अबाधित उन्नति का ही फल है। (Science and Religion, p.16.) (वै. सम्पत्ति पृ. 150)

There is manifest progress in the succession of being on the surface of the earth. This progress consists in an increasing similarity of the living fauna, and among the vertebrates especially, in their increasing resemblance to man .... But this connection is not the consequence of a direct linkage between the fauna of different ages. There is nothing like parental descent connecting them. The fishes of the Palaeozoik age are in no respect the ancestors of the reptiles of the secondary age, nor does man descend from the mammals which preceded him in the Tertiary age. The link by which they are connected is of a higher and immaterial nature and Himself, whose aim in forming the earth, in allowing it to undergo

successively all the different types of animals which have passed away, was to introduce man upon the surface of our globe. Man is the end towards which all the animal-creation has tended from the first appearance of the Palaeozoic fishes.

अर्थात् पृथिवी पर उत्पन्न होने वाले, बिना हड्डी के जन्तुओं और मनुष्यादि हड्डीदार प्राणियों में एक समान ही उन्नति देखी जाती है, परन्तु इस समानता का यह तात्पर्य नहीं है कि एक प्रकार के प्राणी दूसरे प्रकार के प्राणियों से ही विकसित हुए हों। आदिम कालीन मत्स्य ही, सर्पणशील प्राणियों के पूर्वज नहीं हैं और न मनुष्य ही अन्य स्तनधारियों से विकसित हुआ है। प्राणियों की श्रृंखला किसी अभौतिक तत्व से सम्बन्ध रखती है, जिसने पृथिवी पर अनेक प्रकार के प्राणियों की सृष्टि करके अन्त में मनुष्य की रचना की है। - Principles of Zoology, Pg. 205-206 by **Agassiz** (वै. सम्पत्ति पृ.150-151)

How did living creatures begin to be upon the earth? In point of science, we do not know. अर्थात् विज्ञान के द्वारा हम नहीं जानते कि पृथिवी पर जीवधारी प्राणियों की सृष्टि कैसे हुई। -Introduction to Science, Pg. 142 by **J.A. Thomson** (वै. सम्पत्ति पृ.152)

The question is : what was the manner of their being upon the previously tenantless Earth? Our answer must be that we do not know.

अर्थात् इस उजाड़ पृथिवी पर प्राणी कैसे उत्पन्न हुए? इस प्रश्न का हम यही उत्तर देते हैं कि हम लोग नहीं जानते।-Evolution, Pg. 70 by **Prof. Patrick Geddes** (वै. सम्पत्ति पृ.152)

नवम्बर सन् 1922 के New Age नामक पत्र में Jones Bowson कहते हैं कि 'ब्रिटिश म्यूजियम (अजायबघर) का अध्यक्ष **डॉ. ऐथ्रिज** कहते हैं कि इस ब्रिटिश म्यूजियम में एक कण भी ऐसा नहीं है, जो यह सिद्ध कर सके कि जातियों (Species) में परिवर्तन हुआ है। विकास विषयक दस में नौ बातें व्यर्थ और निस्सार हैं। इनके परीक्षणों का आधार सत्यता और निरीक्षण पर बिलकुल अवलम्बित नहीं है। संसार भर में कोई भी सामान ऐसा नहीं है, जो विकास की सहायता करता हो।' (वै. सम्पत्ति पृ.170)

प्रथम विश्वयुद्ध के समय **'क्रिश्चियन हेरल्ड'** में यह समाचार छपा था कि ब्रिटिश साइंस सोसायटी का अधिवेशन मेलबोर्न (आस्ट्रेलिया) में हुआ। **प्रोफेसर विलियम वेटसन** इसके सभापति थे। उन्होंने अपने भाषण में कहा कि 'डारविन का विकासवाद बिलकुल असत्य और विज्ञान के विरुद्ध है।' **प्रो. प्रेट्रिकगेडिस** कहते हैं कि For it must be admitted that the factors of the evolution of man partake largely of the nature of the may-be's which has no permanent position in Science. अर्थात् यह युद्ध इस बात का प्रमाण है कि मनुष्य जैसा पहले था वैसा ही अब भी है। -Ideals of Science and Faith. (वै. सम्पत्ति पृ.212)

सर जे. डब्ल्यू डासन कहते हैं कि 'विज्ञान को बन्दर और मनुष्य के बीच की आकृति का कुछ भी पता नहीं है। मनुष्य की प्राचीनतम अस्थियाँ भी वर्तमान मनुष्य जैसी ही हैं। इनसे उस विकास का कुछ पता नहीं लगता, जो इस मनुष्य-शरीर के पहले हुआ था।' (वै. सम्पत्ति पृ.170)

सिडनी कॉलेट कहते हैं कि 'साइंस की स्पष्ट साक्षी है कि मनुष्य अवनत दशा से उन्नत दशा की ओर चलने के स्थान में उल्टा अवनति की ओर जा रहा है। मनुष्य की आरम्भिक दशा उत्तम थी।' (वै. सम्पत्ति पृ.171)

आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री द्वारा लिखित **"वैदिक युग और आदि मानव"** पुस्तक पृ. 11 से उद्धृत-

Now a days unhappily Jelly fish produces nothing but Jelly fish. But had that gelatinous morsel been fated to live. say a million of centuries earlier it might have been the proginitor of the race from which Homer and Plato, Devid and paul, Shakespear and our eminent professor have in their order been evolved. (**Conder's** Natural Selection and Natural Theology)

If it could be shown that the thrush was hatched from the lizard. (**Conder's** same book)

फ्रैंच दार्शनिक Henri Bergson को Anti Darwin theory देने के लिए नोबेल पुरस्कार मिला। फिर भी हमारे प्रबुद्धों को कुछ समझ नहीं आया। नेट पर अनेकों अन्य विदेशी वैज्ञानिकों को Neo Darwinism आदि डार्विन विरोधी थ्योरिज् की चर्चा करते सुधी पाठक देख सकते हैं। इधर भारतीय वैज्ञानिकों की चर्चा के प्रसंग में आर्य विद्वान् **स्वामी विद्यानन्द सरस्वती** द्वारा

रचित **"सत्यार्थ भास्कर"** ग्रन्थ (पृ. 877) को उद्धृत करना यहाँ प्रासंगिक है-

वनस्पतिशास्त्र के अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त विद्वान् **डा. बीरबल साहनी** से पूछा गया- "आप कहते हैं कि आरम्भ में एक सेल के जीवित प्राणी थे, उनसे उन्नति करके बड़े-2 प्राणी बन गये। आप यह भी कहते हैं कि आरम्भ में बहुत थोड़ा ज्ञान था, धीरे-2 उन्नति होते हुए ज्ञान उस अवस्था को पहुंच गया, जिसको विज्ञान आज पहुंचा हुआ है।" तब आप यह तो बताइये कि- "Wherefrom did life come in the very beginning and wherefrom did knowledge come in the very beginning?" अर्थात् "प्रारम्भ में जीवन कहाँ से आया और प्रारम्भ में ज्ञान कहाँ से आया? क्योंकि जीवन शून्य से उत्पन्न हो गया, यह नहीं माना जा सकता।" **डा. साहनी** ने उत्तर में कहा, **"इसके साथ हमारा कोई सम्बन्ध नहीं कि आरम्भ में जीवन या ज्ञान कहाँ से आया।"** हम इस बात को स्वीकार करके चलते हैं कि आरम्भ में कुछ जीवन भी था और कुछ ज्ञान भी था-

"With this we are not concerned as to where from life came in the very beginning or wherefrom knowledge came in the very beginning. We are to take it for granted that there was some life in the beginning of the world and there was knowledge also in the beginning of the world and by slow progress it increased."

इससे भी विकासवाद की दुर्बलता प्रकट हो जाती है।

अन्त में मैं भारत ही नहीं, अपितु विश्व भर के प्रबुद्ध मानवों व वैज्ञानिकों से निवेदन करना चाहूंगा कि वे अपने इतिहास पर गर्व करना सीखें। आप सभी यह तो मानते व जानते ही हैं कि वेद संसार में सबसे प्राचीन ग्रन्थ है। हम यह भी सिद्ध करने की क्षमता रखते हैं कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है तथा **वेद मंत्ररूपी ध्वनि तरंगों से ही सृष्टि की उत्पत्ति हुई है अर्थात् जिन ध्वनि तरंगों से ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति हुई, वे ध्वनियां वेद मंत्र ही थे एवं वर्तमान में वे ही तरंगें सर्वत्र विद्यमान हैं।** यह मेरी **Vaidic Rashmi theory of Univerce** है, जो इस ब्रह्माण्ड को वर्तमान भौतिकी की अपेक्षा बहुत आगे तक समझा सकती है। इस थ्योरी के प्रकाशित होने से पूर्व मैं इस पर कुछ लिख नहीं सकता। मैंने ऋग्वेद के मंत्रों द्वारा भी मनुष्य की उत्पत्ति की चर्चा इस लेख में की है। वेद तथा ऋषियों के मत में मनुष्य की प्रथम पीढ़ी सर्वाधिक बुद्धिमती,

शारीरिक व मानसिक बल तथा सत्वगुण सम्पन्न थी। उसके पश्चात् उनमें न्यूनता ही आयी, न कि विकास हुआ। हम संसार भर के सभी मानव उन्हीं महान् पूर्वजों के वंशज हैं। **वेद हम सबका है, ऋषि हम सबके पूर्वज हैं। वेद व ऋषियों के ग्रन्थों पर मानवमात्र ही नहीं, अपितु ब्रह्माण्ड के सभी बुद्धिमान् प्राणियों का साझा अधिकार है। आयें, हम सभी इस साझी विरासत को अपनायें, अध्ययन व अनुसंधान करें और गर्व से स्वयं को पृथिवी के सबसे बुद्धिमान् मनुष्यों का वंशज कहें।** मैंने केवल जैव विकासवाद पर ही चर्चा की है, ज्ञान व भाषा के कथित क्रमिक विकास की समालोचना पृथक् लेख वा पुस्तक में की जा सकती है। जैव विकासवाद पर भी संक्षिप्त चर्चा की है अन्यथा यह लेख एक पुस्तिका का रूप ले लेता। विज्ञ पाठक ज्ञान व भाषा के विकास के साथ-2 सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में अद्भुत विज्ञान को समझने हेतु **"वेदविज्ञान आलोकः"** नामक मेरे विशाल ग्रन्थ, जो कुल 2800 पृष्ठों का चार भाग में छप रहा है, की प्रतीक्षा करें। हां, चलते-2 एक बात यह भी लिखना उचित समझता हूँ कि यदि कोई प्रबुद्ध यह कहे कि जब सूक्ष्म रश्मियां विकास यात्रा करते हुए नाना कण, फोटोन एवं नाना लोकों को उत्पन्न कर सकती हैं अथवा उनके रूप में प्रकट हो सकती हैं, तब अमीबा से मनुष्य शरीर तक के विकास को क्यों मिथ्या बताया जाता है? इस विषय में हमारा निवेदन है कि जड़ जगत् के निर्माण वा विकास में रश्मियां कण वा फोटोन प्रायः अपने स्वरूप को भी बनाये रखते हैं, परन्तु कोई विकासवादी यह नहीं मानेगा कि विभिन्न प्राणियों के शरीरों में अमीबा अपने स्वरूप में अवस्थित रहता है। इस कारण यह तुलना करना उचित नहीं है।

मेरे मित्रो! जरा विचारें कि **जो व्यक्ति वा समाज स्वयं को पशुओं का वंशज कहे, उसमें आत्म-स्वाभिमान कहाँ रहेगा?** इस विषय में लखनऊ विश्वविद्यालय में दिए एक व्याख्यान में नासा के वैज्ञानिक और भारतीय प्रधानमंत्री के पूर्व वैज्ञानिक सलाहकार **प्रो. ओ.पी. पाण्डेय** ने डार्विन के विकासवाद को खारिज करते हुए उचित ही कहा है कि 'देश भर के बच्चों को गलत सिद्धान्त पढ़ाया जा रहा है, जिससे उन पर बुरा प्रभाव पड़ रहा है।' (नवभारत टाइम्स -2 फरवरी 2018) आइये, इस दीन-हीनता के गर्त से निकालकर मैं आपको सर्वोच्च शिखर पर ले जाना चाहता हूँ। आयें, हम सब एक ईश्वर के पुत्र-पुत्री हैं एवं यह पृथिवी ही हमारी आदि जन्मदात्री मां है, इस कारण यह सम्पूर्ण विश्व एक ही परिवार है। इस परिवार को सुख, शक्ति व आनन्द की ओर ले जाने का हम सब मानवों का दायित्व है। हमें विज्ञान को खुले व उदार मस्तिष्क से ही पढ़ने का प्रयास करना चाहिए। हमें पूर्वाग्रहों से बचकर सत्य-असत्य का विवेक करने हेतु सतत प्रयत्न करते रहना चाहिए।
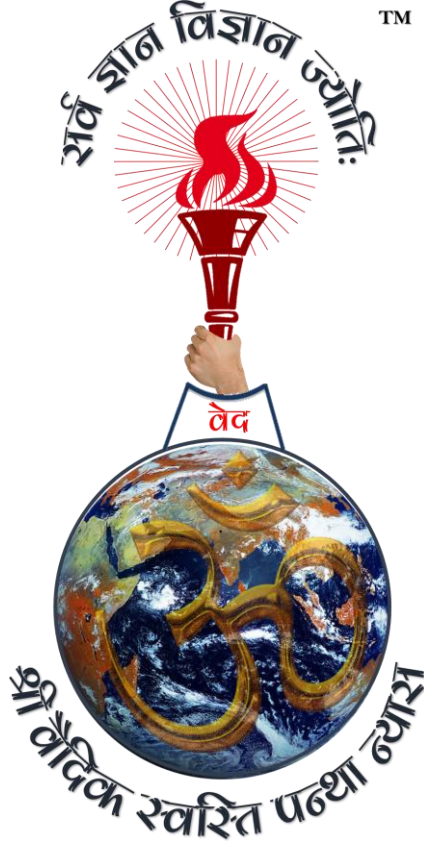
Contact us:

VAIDIC AND MODERN PHYSICS RESEARCH CENTRE

Ved Vijnyan Mandir, Bhagal Bheem, Bhinmal

Dist.: Jalore (Rajasthan), India

Ph.: +912969 292103, Mo.: +919414182173, +917424980963